ISSN No. : 2395-4000

संयुक्तांक

प्रयाग-पथ

वर्ष 2, अंक 1-4, जुलाई 2016

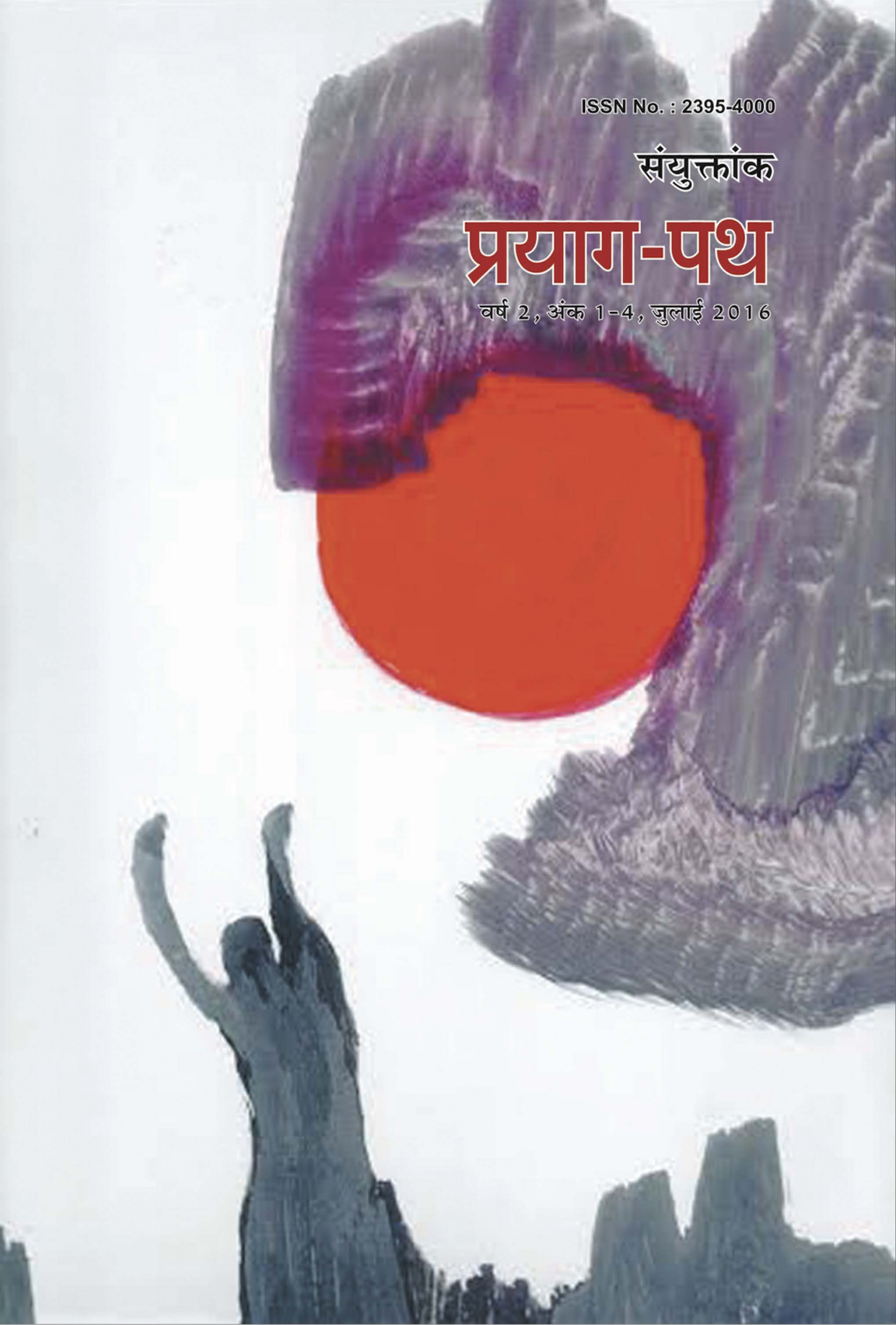

प्रयाग-पथ

साहित्य, कला और संस्कृति का संचयन

वर्ष : 2, अंक : 1-4, जुलाई-2016 (संयुक्तांक) पूर्णांक : 4

सम्पादक
हितेश कुमार सिंह

लेज़र टाइपसेटिंग
ज़िया कम्प्यूटर्स, 3/11, समीर प्लाजा,
पुराना कटरा, इलाहाबाद

मुद्रक
इण्डियन प्रेस प्रा.लि.,
36, पन्नालाल रोड, इलाहाबाद-211002

मूल्य
एक प्रति : रु. 50.00 (डाक खर्च अतिरिक्त)
संस्थाओं के लिए : रु. 60.00 (डाक खर्च अतिरिक्त)
सदस्यता चार अंक : 300.00 (डाक खर्च सहित)
आजीवन सदस्यता : पाँच हजार रुपये
संस्थाओं के लिए : दस हजार रुपये

सम्पर्क
1546, किदवई नगर,
अल्लापुर, इलाहाबाद-211006
उत्तर प्रदेश
मोबाइल : 09452790210
ई-मेल : prayagpathpatrika@gmail.com

सम्पादन, प्रकाशन एवं संचालन पूर्णतः अवैतनिक/अव्यवसायिक
प्रयाग-पथ में प्रकाशित सामग्री के विचार सम्बन्धित लेखकों के अपने हैं, सम्पादक अथवा प्रकाशक का उससे सहमत होना अनिवार्य नहीं है।
समस्त कानूनी विवादों का न्यायक्षेत्र इलाहाबाद उच्च न्यायालय, उत्तर प्रदेश होगा।

अनुक्रम

दो कवि

1. दिनेश कुमार शुक्ल की कविताएँ 1
2. पवन करण की कविताएँ 10

स्मरण

1. रवीन्द्र कालिया - डॉ. विश्वनाथ त्रिपाठी 18
2. भाषा में दिपते है अर्थ, अभिप्राय और आशय - ओम निश्चल 22
3. प्राचीन स्वप्न, समता और न्याय का... - प्रांजल धर 31
4. निदा फाजली : एक विनम्र श्रद्धांजलि - महेन्द्र नाथ ओझा 38

संस्मरण

विपिन अग्रवाल - रमेश चन्द्र शाह 44

आलेख

1. मंटो की कहानियाँ और यथार्थवादी परंपरा - चंचल चौहान 49
2. कामायनी : मुक्तिबोध और सभ्यता-विमर्श - विजय बहादुर सिंह 54
3. भारतीयता की अवधारणा और रामविलास शर्मा - अजय तिवारी 64
4. रवीन्द्रनाथ, भारतीय भाषा और नव निर्माण - मानस मुकुल दास 78
5. राजनीति के मंच पर स्त्री सशक्तीकरण..... - प्रो0 रोहिणी अग्रवाल 90

कला

1. बनारस के खामोश चित्र और मध्यवर्गीय जीवन - बलराम 97
2. लघु फिल्मों के बड़े सरोकार - राजेन्द्र राजन 101
3. अवध के लोक चित्रांकन एवं सांस्कृतिक... - डॉ0 नीतू सिंह 106

पाँच कहानियाँ

1. मुक्तावस्था - जयनंदन 112
2. धकीकभोमेग - पंकज सुबीर 126
3. घोंघा - बसंत त्रिपाठी 133
4. सिंघवा उवाच - दीर्घ नारायण 139
5. रेत का ढेर - प्रियंका मिश्र 152

उपन्यास-अंश

बीहड़ के रास्ते - महेश कटारे 157

कविताएँ

1. हरे प्रकाश उपाध्याय 165
2. रविशंकर पाण्डेय 168
3. परमेश्वर फुंकवाल 172
4. संजय अलंग 165

पुस्तक समीक्षा

1. रेणु के अन्दाज़े बयाँ हँसाता है रुलाता है - गणेश चन्द्र राही 177
2. जरूरी है एक सुरीली तान - डॉ. रचना शर्मा 179
3. राजा का धौरे-दोपहर शिकार और गोरी का हिरन होना ...? - जितेन्द्र विसारिया 182
4. किसानों के साथ की गयी तपस्या का नाम है ''अकाल में उत्सव'' - वंदना अवस्थी दुबे 187
5. राहे-हक़ का आईना - डॉ. अवधेश प्रधान 190

सम्पादक की ओर से

*इस सूचना क्रांति और आधुनिकता के दौर में हम भले ही चाँद पर घर बसाने की सोच रहे हैं, हर दिन नये कीर्तिमान रच रहे हैं, लेकिन समाज का बहुत बड़ा भाग आज भी अंधविश्वास और झूठी परंपराओं के जाल में फँसा हुआ है। आश्चर्य तो तब होता है जब एक शिक्षित समाज भी इन अंधविश्वासी परंपराओं के भंवर में नाच रहा है। हम बहुत-सी परंपराओं और अंधविश्वासों पर बिना विचार किए उन्हें ज्यों का त्यों स्वीकार किए जा रहे हैं। हमारी बहुत सी मान्यताएँ ऐसी हैं जो विज्ञान या आधुनिक ज्ञान की कसौटी पर खरी नहीं उतरती हैं। वैज्ञानिक युग के बढ़ते प्रभाव के बावजूद अंधविश्वास की जड़ें समाज में व्याप्त हैं। अंधविश्वास, आडंबर और झूठी परंपराओं का अधिक प्रभाव हमारे ग्रामीण क्षेत्रों में दिखाई देता है। धर्म का झूठा चोला पहने कई पाखंडियों द्वारा आज भी लोगों को जादू-टोने, भूत-प्रेत, तांत्रिक-विद्या से बीमारियों का उपचार भभूत या और न जाने किन-किन झूठी मान्यताओं द्वारा किया जा रहा है, जबकि इन चीजों का कुछ भी औचित्य नहीं है। अतः हमें इन आडंबरों एवं पाखंडों से समाज को परिष्कृत करने में योगदान करना चाहिए। हमें यह बात मन में बैठा लेनी चाहिए कि हमारे जीवन में जो भी अच्छा या बुरा होता है, कहीं न कहीं उसके उत्तरदायी हमीं होते हैं। गोस्वामी तुलसीदास ने भी रामचरितमानस में यह बात कही है- **'कोउ न सुख दुख कर दाता। निज कृत कर्म भोग सब भ्राता।।'** अर्थात् हमें सुख या दुख देने वाला कोई नहीं होता है, हमारा कर्म ही हमें सुख और दुख प्रदान करता है।*

दूसरी बात जो मैं कहना चाह रहा हूँ वह यह है कि हमारा देश विविधताओं से भरा महान देश रहा है। यह महानता उसकी संस्कृति एवं सभ्यता के कारण रहा है। हमारे यहाँ घृणा, असहिष्णुता एवं प्रतिक्रियावाद के लिए कहीं कोई भी स्थान नहीं रहा है। पिछले कुछ दशकों से एक तबका प्रजातंत्र एवं अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता के नाम पर खड़ा हुआ है, जिसका काम एकमात्र जहरीला आलाप करना है। यह मनोवृत्ति समाज को विघटित करने एवं देश को बाँटने की ओर ले जा रही है। हमें इससे सावधान रहने की आवश्यकता है क्योंकि जब देश ही नहीं रहेगा तो हमारा अस्तित्व ही कहाँ रहेगा। देश पर जब कोई संकट आता है, उसके लिए जीने-मरने या कुछ करने का समय आता है, तब यही लोग कहीं भी दिखायी नहीं देते। हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि हमारा देश एक बहुसंस्कृति पूजा-पद्धति, रीति-रिवाज, खान-पान, पहनावा, भाषा, रंग-रूप का देश है। हमारे यहाँ देसी कहावत है- ***'कोस-कोस पर पानी बदलै, चार कोस पर बानी।'*** *यह कहावत यह सिद्ध करता है कि इस बदलाव के पीछे कहीं न कहीं कुछ भौगोलिक कारण भी है। इसमें सामंजस्य बनाने में बहुत समय लगता है और इसके ताने-बाने को बिगाड़ने में बहुत कम समय लगता है। प्रत्येक भारतीय का यह कर्तव्य होना चाहिए कि किसी भी स्थिति में वह अपने देश के ताने-बाने को बिगड़ने न दे और असामाजिक तत्वों को उसके नापाक इरादों में सफल न होने दे। तभी अपने देश को हम आगे बढ़ा सकते हैं और विश्व पटल पर उसे एक सभ्य समाज की श्रेणी में आ सकते हैं।*

प्रख्यात व्यक्तित्व रवीन्द्र कालिया, वीरेन डंगवाल, पंकज सिंह, निदा फ़ाजली, सतीश जमाली और मुद्राराक्षस हमारे बीच अब नहीं रहे, इन सभी के प्रति प्रयाग-पथ की श्रद्धांजलि।

हितेश कुमार सिंह

दिनेश कुमार शुक्ल की कविताएँ

शून्य

यह सरल सघन संक्षिप्त
और अंतिम अभिव्यक्ति चराचर की

यह एक बूँद
जो विलुप्तियों से बच निकली
ढलका आँसू यह एक
यह स्वेदसिंधु की एक बूँद,
जो जुते खेत की माटी में
बो गई बीज

आनंद सिन्धु के सुख में डूबी पलकों की
सीपी में मुक्ता-बिन्दु

यह चन्द्र सूर्य पृथ्वी कंदुक कदम्ब कुच है
गओं का चरमोत्कर्ष यह शून्य
यह होने और न होने की सीमा रेखा पर
थर-थर थर-थर काँप रहा ब्रह्माण्ड!

हजारो में एक मुस्कान

एक हजार शब्द
गूँजते हैं एक हजार/तारे टिमटिमाते हैं

एक पेन्डुलम आकाश से लटका हुआ
क्षितिज के इस छोर से उस छोर तक जाता है
समूचे अस्तित्व के आर पार
अचानक सन्नाटा
एक भी तारा नहीं न आकाश में न आँखों में
पेन्डुलम टकराते हैं
और कर पड़ते हैं
शब्द गूँजते और फट पड़ते हैं
तारे, चमकते और फट पड़ते हैं
आँखें देख कर भी कुछ नहीं देखतीं
एक हजार शब्द
पतझर के पत्तों से तैरते गिरते हैं
एक हजार तारे एक हजार आँखें बन कर बुझ जाते हैं
सन्नाटा तार-सा खिंचता चला जाता है
हवा में शब्दों की सुगंध है
हवा में, आँखों की दीप्ति है,
हवा में तारों की धूल है
हवा से हवा हवा हो गई है
आँखें तो रात की आँखें थीं
तारे तो आँखों के तारे थे
पेन्डुलम अलग-अलग समयों में उलझ गये
और अब टकरा रहे हैं
वक्त उलझे हुए हैं
सभी के अपने-अपने वक्त रात की आँखें नींद के पहाड़ों से बोझिल
दिन अबूझे रंगों के विराट कैनवास
हवा में पाल की तरह फूलते उड़ते
दिन सूरज की चादर थे।
उलझे हुए वक्तों की डोर से
उलझे हुए दिनों में उलझे हुए वर्ष

शर्म और ग्लानि और प्यार का
समुद्र-तलवार-सी नुकीली मछलियों से भरा हुआ
हवा प्यार और शर्म और ग्लानि और यादों
का तूफान, जिसमें तारों की धूल के बगूले
जिनमें शब्दों की फूटी हुई गूँज
जिसमें टूटे-फूटे गीत और राग और सन्नाटा
आत्मदया, प्यार और विक्षोभ की लहरों पर
यात्रा लुप्त होते द्वीप की

जहाँ पहुँच कर भी पहुँचना असंभव
यात्राओं में गुँथी हुई यात्रायें
गन्तव्यों में गुँथे हुए गन्तव्य
समुद्रों में डूबते समुद्र
पानी में घुलता हुआ पानी
आँखों में घुलता हुआ नमक
आँखों के समुद्रों में यात्रायें अनन्त की ....

ज्वार टूटता है आकाश काँपता है
मन एक पक्षी है निपट अकेला
काँपते आकाश के डूबते समुद्र पर झपटा
मन एक समुद्री पक्षी है
तट से लाखों मील दूर
लाखों वर्षों से झपटता दिखता पक्षी समुद्र की ओर
एक हजार शब्द
एक हज़ार अर्थों की गूँज में
एक हज़ार वक्तों के अलग-अलग पेन्डुलम
एक हजार तारों से लटकते उलझते
एक हजार उलझनें
एक हजार संसार
एक हजार आँखों के
एक हजार आकाशों के तारों का टिमटिमाना/यह सब मिल कर
जैसे कोई एक अकेला बच्चा
छूट गया हो वीराने में
और अकेला बैठा हुआ मगन मुस्कुरा रहा हो

और गुड़हल का फूल
एक दिन खिलता है
किशोर कनपटियाँ लाल हो रही हैं
अभी किसी ने देखा, नहीं
मगर कुछ है जो देख रहा है सब कुछ को।

लथपथ संसार

बड़ी-बड़ी बूँदों में भीगती
जुलाई की रातें
अरुणाभा में उतर कर